" अध्याय दूसरा "

"जैनेन्द्रकुमार के साठोत्तरी उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय "

[१] मुक्तिबोध [१९६५]

[२] अनन्तर [१९६८]

[३] अनामस्वामी [१९७४]

[४] दशार्क [१९८५]

अध्याय दूसरा

"जैनेन्द्र कुमार के साठोत्तरी उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय"

१. मुक्तिबोध [१९६५]

जैनेन्द्र कुमार ने "जयवर्धन" यह उपन्यास १९५६ में लिखा था उसके दस साल बाद मुक्तिबोध की रचना की है। मुक्तिबोध उपन्यास में केवल मुक्ति की चर्चा की गयी है। कार्य कुछ भी नहीं होता है, केवल वाद-विवाद होता है। यह वाद-विवाद कभी सहाय और राजश्री में और कभी सहाय और नीलिमा में होता है। काम राज-योजना के अनुसार कुछ मंत्रियों को मन्त्रिमण्डल से हटना पडा था। आजादी के बाद पहली बार नेताओं के सामने यह प्रश्न उठा, कि गद्दीपर बैठना ठीक है या गाँव में जाकर किसानों के बीच में काम करना अथवा अन्य पिछडे लोगों के मनोबल को उठाने के लिए उनके बीचमें जाकर काम करना। इसी विचार में उपन्यास का नायक "सहाय" रहता है।

श्री सहाय को बी.पी. ने मन्त्रि मण्डल में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया है। अब श्री सहाय के अन्तर में यह द्वंद्व चलता है कि मंत्री पद पर रहना गांधी मार्ग के अनुकूल है या गाँव में रहकर सारा जीवन जीना नीति-सम्मत है। श्री सहाय के मन में राजनीतिके प्रति विरक्ति का जगना ही मुक्तिबोध है। किन्तु अन्त में श्रीमती नीलिमा के तर्कों से पराजित होकर बी.पी. के अनुरोधपर श्री सहाय मन्त्रि-मण्डल में शामिल होना स्वीकार कर लेते हैं। श्री सहाय नीतिवादी और गांधीवादी हैं। वे भौतिक परिस्थिति की उपेक्षा करके कर्तव्य की जिन्दगी जीना चाहते हैं। श्री सहाय पचपन वर्ष के प्रौढ और प्रख्यात राजनीतिज्ञ हैं। उनके नाम का लोग लाभ उठाते हैं। वे आन्तरराष्ट्रीय

महत्व के व्यक्ति माने जाते हैं। इस तरह यहाँ सब कुछ देखने के बाद श्री सहाय के सामने बहुत बडी समस्या खडी है वह उनकी पत्नी राजश्री वह नहीं चाहती, कि उसके पति मिस्टर सहाय दुनिया को बेकार मानकर स्वयं बेकार बन जाएँ। इसी लिए वह कहती है, "दुनिया बेकार हैं। लेकिन उससे हरना कैसे हो सकता है।" राजश्री स्वयं में नि: स्व बनकर पति के "स्व" को पराजित कर देती है। वह सबसे मेल रखती है, और चाहती है, कि पति भी सबसे मेल रखें। "

श्री सहाय गांधीवादी कॉंग्रेस सदस्य एवं मन्त्री होने के कारण गांधीवाद का विचार उनमें था और यह घर की समस्या उनके बीच आ रही थी। आज के अन्य कॉंग्रेसी नेताओं की तरह श्री सहाय भी अपने आहत अहम की रक्षा के लिए गांधी-मार्ग का सहारा लेना चाहते हैं। वे रात के सन्नाटे में गाँधी की समाधि का दर्शन करते हैं और रात को एक बजे अपने घर पहुँचते हैं। पत्नी की जाँघ पर मुँह रखकर श्री सहाय रोते हैं और अपना मन खाली करते हैं। उनके मन में संसद सदस्य और मन्त्रीपद से त्याग - पत्र देकर मुक्ति का अनुभव करना चाहते हैं। लेकिन नीला जैसी प्रेमिका, पत्नी, पुत्र, दामाद, मित्र तथा शुभाकांक्षी ऐसी ही अनेक व्यावहारिक बाधाएँ सहायके मार्ग में ला खडी करते हैं, क्यों कि वे उसके क्षेत्रीय प्रतिनीधी और प्रस्तावित नये मन्त्रिमण्डल के सहयोगी उन्हें निरन्तर सदस्य बने रहने और मंत्रित्व स्वीकार लेनेपर जोर डालते हैं क्यों कि वे व्यक्ति से अधिक पद की प्रतिष्ठा को महत्व देते हैं।

इन सब कारणों के कारण वह "मुक्ती" के"बोध" को पाकर भी मुक्त नहीं हो पाता।

यह उपन्यास घर-बाहर की विषमताओं से परे व्यक्ति के अन्त:बाह्य की समस्या का चित्रण करता है। तभी इसमें नितान्त घरेलु घटनाओं के परिवेश की उपलब्धि होती हैं। पुत्री-पुत्र-जमाता, प्रेयसी, पत्नी,

राजनीतिक मित्र सभी सहाय के निर्णय के विरूद्ध हैं।

जैनेन्द्र ने "मुक्तिबोध" में "सहाय" यह पात्र गाँधीवादी विचारों का समर्थक है, वह इस मन्त्रीपद पर रहना उचित नहीं समझता, गाँव में जाकर किसानों के बीच काम करना अथवा अन्य पिछड़े लोगों के मनोबल उठाने के लिए उनके बीच में जाकर काम करना यह उसका विचार है लेकिन पत्नी राजश्री ने तो कहा, कि दुनिया को बेकार मानकर स्वयं बेकार बन जाना ठीक नहीं है। साथ ही साथ प्रेमिका नीलिमा, पुत्र, पुत्री, दामाद, मित्र, शुभाकांक्षी इन्हीं सभी के विरूद्ध के कारण सहाय के मनमें "त्यागपत्र" देने का विचार आकर भी तमाम लोगों ने सवाल खडे करने के कारण साहय असफल बन जाता है।

जैनेन्द्र जीने यही "मुक्तिबोध" उपन्यास में बताने का प्रयास किया है कि समाज में जब एकाद आदमी अच्छे रास्तेपर या समाज के लिए कुछ करने के बारे में सोचता है, तो वे लोग अपने निजी स्वार्थ के कारण उस आदमी को पथभ्रष्ट या निर्णय में बदल करने का प्रयास जारी रखते हैं। वैसी स्थिति "सहाय" की "मुक्तिबोध" में की है, जिसके कारण सहाय "त्यागपत्र" दे नहीं सकता।

२] <u>अनन्तर [१९६८]</u>

"अनन्तर" इस उपन्यास को "जयवर्धन" उपन्यास में प्रकट विचार धारा की विकसित अथवा प्रौढ कृति कहा जा सकता है। यह उपन्यास आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। उपन्यास का नायक "प्रसाद" एक विख्यात लेखक है। चिन्तन के क्षेत्र में उसकी प्रतिष्ठा है। प्रसाद को सामाजिक प्रतिष्ठा के साथ साथ पारिवारिक सुख भी मिला है। पुत्र और पुत्री के विवाह हो चुके हैं। वे किराये के मकान में रहते हैं लेकिन पुत्र और पुत्रवधू को चार हजार रूपये देकर मधुपर्व मनाने कश्मीर भेजते हैं। "अनन्तर" का यह नायक "प्रसाद" हमेशा हंसी-खुशी में रहते

हैं। वे बगल-लेटी पत्नीकी ओर कम, चाँद की ओर अधिक देखते हैं, आसमान ताकते-ताकते मानव-जीवन-चक्र की सार्थकता पर विचार करते हैं, लेकिन जीवन का अर्थ नहीं समझ पाते। प्रसाद के विचार भी विचित्र हैं।

घर की सब जिम्मेदारी खत्म करके भी वे अपने आपको भीतर से टूटता हुआ अनुभव करते हैं। अन्तरमन की रिक्तता का कारण उनकी समझ में नहीं आता है। इसी सिल सिले में वे अपने जीवन के बीते बासठ वर्षों का लेखा-जोखा करने बैठे जाते हैं। और एकाएक दिन उनके जीवन में परिवर्तन का मोड आ गया। जब वे अपने पुत्र और पुत्रवधु को स्टेशन पर विदा करने जाते हैं, और वहाँ से लौटते वक्त उनके मन में अपने जीवन की व्यर्थता का अनुभव होता है। व्यर्थता बोध की स्थिती में वे पलायन का मार्ग अपनाना चाहते हैं। वे अपने जीवनकाल में किये गये रचनात्मक कार्यों से सन्तुष्ट नहीं हैं। वह अपने जीवन के शेष अमूल्य क्षणों को समाज-सेवा में लगाना चाहते हैं। और सौभाग्य से इसी प्रसंग में उनका परिचय गुरु आनन्द माधव से होता है। वे गाँधीवादी विचार के समर्थक एवं प्रचारक हैं। इसलिए आनन्द माधवसे प्रेरित होकर प्रसाद "आबू पर्वत" पर आयोजित एक सभा में भाग लेने के लिए जाते हैं। वे अपने व्याख्यान में मानवीय एकता पर बल देते हैं। वहाँ अनेक चर्चाओं में भाग लेते हैं। प्रसाद गाँधीवादी विचारधारा को देश की प्रगति के लिए अनिवार्य मानते हैं। उनकी भावनाओं का उदात्तिकरण हो गया है। अब समाज-सेवा ही उनका धर्म बन गया है। प्रसाद ने अभी समाज-सेवा के अलावा दूसरा कुछ न करने का निर्णय लिया है।

जिस प्रकार "कल्याणी" में "तपोवन" "जयवर्धन" में "शिवधाम" और "मुक्तिबोध" में "सहाय" की गाँव में आकर रहने की इच्छा प्रकट की गयी है, उसी प्रकार "प्रसाद" "शिवाधाम" की केवल इच्छा प्रकट नहीं करता, तो उसकी स्थापना करके ही रहता है।

३] अनामस्वामी [१९७४]

यह "जयवर्धन" के बाद तीसरा और जैनेन्द्र कुमार के विश्रान्ति बाद सातवाँ तथा क्रम में ग्यारहवाँ विचारपूर्ण उपन्यास है। जिसे छः वर्ष के अंतराल पर प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास की रचना वैसे १९४२ में ही की गई थी, लेकिन कमाई के विरूध्द होने की प्रक्रिया में यह पूर्ण नहीं हो सका था।

"त्यागपत्र" के प्रमोद के त्यागपत्र देने के पश्चात् के जीवन का चित्रण इस उपन्यासमें किया गया है। प्रमोद के बालजीवन का एक साथी प्रबोध अब "अनामस्वामी" है। उसका एक आश्रम है, जिसमें अहंकार और अहन्ता के ज्वार से मुक्त जीवन जीने की कल्पना साकार करने का प्रयत्न किया गया है।

अनामस्वामी का आश्रम प्राचीन ऋषी मुनियों के आश्रम की स्मृति को ताज़ा करता हैं। इस आश्रम की विविधता दर्शनीय है। नाना नमूने उसमें हैं। एक एकदम अपढ है, तो कुछ चोटी के विद्वान हैं, कोई अनाथ, कोई राजपुत्र। सब की विषमता स्वामी में सम हो जाती है। सब अपने को उनके एक-से पास पाते हैं अनेक के बीच एक है। अनामस्वामी निःस्पृह व्यक्ति है। उसका व्यवहार प्राणी मात्रोंके लिए एक समान है। उसका त्यागमय जीवन अनुकरणीय है। वह जीवन की प्रत्येक क्रिया को सहज और स्वाभाविक रूप में स्वीकार करता है। इतना ही नहीं, अनामस्वामी छोटी छोटी बातों का खयाल रखता है जैसे प्रमोद को उसकी बुआ मृणाल के अन्त समय पर उपस्थित रहने का संकेत देता है। सर पी. दयाल याने "त्यागपत्र" उपन्यास का प्रमोद जो प्रबोध का पुराना साथी है, वह अपनी विधवा पुत्री की बेटी "उदिता" को आश्रम जाने के लिए प्रोत्साहित करता है, परन्तु "उदिता" अपने आध्यात्मिक गुरु शंकर उपाध्याय से प्रभावित है। शंकर और अनामस्वामी में बहुत तीव्र ईर्ष्या है, जिसका कारण रानी वसुन्धरा जो शंकर उपाध्याय की भक्त है।

आश्रम में रहनेवाला दूसरा एक भक्त कुमार है, जिसमें वसुन्धरा विवाहित है और इसी कारण शंकर अनामस्वामी और कुमार इन्हीं के खिलाफ सब कुछ करना चाहता है। उस के मन में द्वेष निर्माण होता है, कुमार भी उसका भक्त है लेकिन वह अब "अनाम" के यहाँ है और "वसुन्धरा" से विवाह करता है। इसी कारण वह विवाह संस्था के विरुद्ध सोचने लगता है।

इस प्रश्न को देखकर अनामस्वामी का वसुन्धरा के प्रति गहन किन्तु सूक्ष्म अनुराग है। वह ह्रदयसे उसके हित की कामना करता है। वासना की गंध तक उसमें नहीं है। गहरी आत्मीयता का भाव इस में देखा जा सकता है। वसुन्धरा पति और प्रेमी के मध्य विभाजित प्रेम-भावना से कुंठित होकर अनामस्वामी के आश्रम में आती है। अनामस्वामी मनोचिकित्सक के रूपमें उसके प्रति आत्मीयता का व्यवकार करता है। वह सन्त है। शरण में आये हुए लोगों के दुःखों का निवारण करना उसका धर्म है।

वसुन्धरा शंकर उपाध्याय को ठुकराकर कुमार से आकर्षित होकर बाद में पति के रूप में उसका स्वीकार करके कुछ दिन गुजरने के बाद कुमार लम्बी बीमारी का शिकार हो जाता है। इस बीमारी के परिणाम स्वरूप उसके शरीर का आधाअंग बेकार हो जाता है, इस असमर्थता से कुमार पीडित है। वह वसुधंरा को पूर्ण स्वतत्रंता प्रदान करता है। और कई बार तो इसके लिए प्रेरित भी करता है। वह वसुन्धरा का शेष जीवन सुखी रहने की कामना करता है। वह अपनी पूरी जागीर और जायदाद को दूसरों में बाँट कर उपकृत होता है। इतना ही नहीं वह शंकर उपाध्याय के तरुणोत्थान की स्थापना के लिए एक ट्रस्ट खोलता है। इस कार्य के लिए वह अपने घर के जेवर तक बेच देता है।

ये सब करने के बाद रानी वसुन्धरा मातृत्व प्राप्त करे इस प्रकार की इच्छा कुमार के मन में नियोग के द्वारा शंकर से पुत्र प्राप्ति की अनुमति कुमार से वसुन्धरा को देता है। परन्तु शंकर द्वारा वसुन्धरा का समर्पण

न केवल ठुकराया जाता है, अपितु शंकर उपाध्याय वसुन्धरा की हत्या का कारण बन जाता है।

इसके साथ ही शंकर उदिता को अपने भतीजे के साथ मुक्त सहाचार के लिए विदेश भेजता है। और अन्त में अपने जीवन की उलझनों से त्रस्त होकर आत्महत्या कर डालता है।

उधर विदेश में उदिता अनेक प्रेमोंमें असफलता पाकर विवाह का स्वीकार करती है। और वापस आकर आपने गुरु शंकर का स्मारक बनाने में लीन हो जाती है।

४. दशार्क [१९८५]

जैनेन्द्र का "दशार्क" यह अन्तिम उपन्यास भाषा, कथा, शैली, शिल्प और मिजाज साथ ही साथ तेवर में तीखा वेधक और क्रान्तदर्शी कृति है। उपन्यास विधा में पहले प्रेमचन्द जैसे उपन्यास सम्राटोंने अपनी नायिका को हमेशा अन्याय का शिकार बनाया है, उनके उपन्यास और कहानियों में नारी ने आत्महत्या भी की है, लेकिन जैनेन्द्र की नायिका सारे सामाजिक ताने बाने को तहस-नहस करने के लिए वेश्या बन जाने में भी नारी की चरितार्थता मानती है।

नारी की ऐसी "अहिन्द्र", अभारतीय तस्वीर उकेरना और फिर भी साफ बच निकलना यह जैनेन्द्र के अद्भूत पराक्रमोंमेंसे एक है। लेकिन इसके लिए उन्होंने जो रणनीति अपनाई वह भाषा और शिल्प के अभूतपूर्व इस्तेमाल में छिपी हुई है। अधिकांश हिन्दी साहित्यकार अपनी भावुकता और बौध्दिक दारिद्र्य को छिपाने के लिए "प्रगीतात्मक" भाषा का इस्तेमाल करते हैं।

लेकिन जैनेन्द्र ने "बम को मखमल" में लपेटने का काम किया है। उन्होंने एक ऐसा गद्य लिया, जो बहुत मृदु, कोमल यहाँ तक कि स्त्रैण भी लग सकता था। लेकिन उसके जरिए उन्होंने ऐसे नारी पात्रों के लिए सहानुभूति समझ और स्वीकार अर्जित की है। जैनेन्द्र प्रतिक्रीयावादी या प्रतिगामी नहीं हैं, बल्कि उनमें भारतीय समाज अपनी सारी द्वंद्वात्मकता के साथ उपस्थित है।

जैनेन्द्र के प्रारंभिक उपन्यास और साठोत्तरी में मुक्तिबोध अनन्तर और अनामस्वामी हैं, लेकिन इन सभी में "दशार्क" यह एक अलग कृति है जिस में समाज से निर्मित और समाजपर ही घोर आघात करनेवाला साथ ही साथ समाज का जिसमें हित भी है, ऐसा एक ज्वलन्त सवाल खडा किया है।

जैनेन्द्रजीने अबतक बारह उपन्यासों की रचना की है, उनमें बारहवाँ और अन्तिम उपन्यास "दशार्क" है। जिसके प्रकाशन की विज्ञप्ति १९७५ में की गई है। इस कृति का स्वरूप अपने पहले उपन्यासों से भिन्न है। कारण यह है कि "दशार्क" में जैनेन्द्र ने दस अध्यायों में कथा इस प्रकार पिरोयी है कि वह एक स्वतंत्र कथा रूपमें भी है, और दस कथाओं में एक सूत्रता की विद्यामानता के परिणामस्वरूप उसका रूप औपन्यासिक भी बना रहा है अपने उपन्यासों में जैनेन्द्र ने प्रेम की शाश्वत समस्या को उठाया है। और मूल नैतिक स्तर पर उसकी गहरी खुदाई की है। उनके "दशार्क" उपन्यास में यह सब तो है, ही साथ ही पैसे की समस्या भी आ जुडी है। इसमें एक नया आयाम खुला है। इसके पहले उपन्यासों में जो समस्यायें बताई हैं, उससे अलग तो कुछ नहीं है, बल्कि यह प्यार की मूलभूत समस्या का ही एकरूप है। प्यार हो या पैसा वह समस्या तब तक ही है जब तक वह अपने मालिकके अहम् को घनीभूत करता है उसके अहं को अखिल में खोने नहीं देता। अहं का अखिल में खोना जैनेन्द्र के उपन्यास का

मूलमन्तव्य रहा है। लेकिन जब प्यार या पैसा शरीर और मन में अटका न रह कर शरीर और मनके पार पा जाता है, यानी अहं से उत्तीर्ण हो जाता है, पर्सनल न रहकर इम्पर्सनल हो जाता है तब वह समस्या नहीं रहता, विकार नहीं बनता, बल्कि वरदान हो जाता है।

इस तरह जैनेन्द्र ने "दशार्क" उपन्यासमें एक मौलिक विचार बताया है जिसका कुछ असर हो जाये। समाज में जब नैतिकता का सवाल आता है, तब समाज एकाद्आदमी को अपराधी ठहराता है उन्हें ऐसा बना देने के लिए क्या समाज जिम्मेदार नहीं है ? नहीं तो दुनियामें कौन है जो बुरा होना चाहता है और कौन है, जो बुरा नहीं है, अच्छा ही है।

रंजना शेखर से विवाहित होती है, कुछ दिनों के बाद एक सन्तान प्राप्त होती, है जिसका नाम "आलोक" है कुछ दिनों के बाद उसका यह सुखी परीवार टूट जाता है। रंजना एम.ए. एल.एल.बी. है शेखर विश्वविद्यालय में प्रथम आकर वह लेक्चरर बनता है। घर में सब कुछ था, नौकर-चाकर थें। बाद में शेखर जुआ खेलने में मग्न रहता है और इसमें हारने के कारण जमीन जायदाद सब खोनी पडती है और वह शराब पीना शुरु कर देता है। इसी कारण रंजना अपने पिता के घर जाती है वहाँ सब कुछ है, पिता अमीर होने के कारण किसी भी चीज की कमी नहीं है। और एक दिन शेखर अपनी पत्नी को मिलने जाता है, तो पत्नी किताब पढने में ही मग्न रहती है, बोलने को तैयार नहीं। नौकरनेबताया कि आपके पति आये है लेकिन उसे मिलना रंजना पसन्द नहीं करती बाद में शेखर अन्दर जाता है। वे पत्नी से कहते हैं उन दिनों को याद करो, जब नौकर कई-कई थे। घर गिरता गया है, और सच पूछिये, तो इस वजह से मिजाज चढता गया है "तुम अपने को क्या समझाती हो ? आखिर मैं आदमी है अपना काम करता हूँ। और

क्या चाहिए ? जिंदगी में उतार चढाव आते ही हैं, तो क्या आदमी को जलील किया जाता है, तुम्हारे बाप बडे हैं खानदान बडा है। तो क्या मैं कुछ माँगने जाता हूँ ? बडे हैं तो वे अपने घर के हैं। पर जिन्दगी गुजारनी है मेरे साथ, या बाप के साथ"? आखिर रहना मेरे मुताबिक होगा कि नहीं ?"[1] न वे ऐसी बातचीत दोनों में होती है, एक दूसरे को वे समझाने का बिलकुल प्रयास ही नहीं करते हैं। तो इससे नतीजा क्या हो सकता है एक दूसरे के पास रहने को तैयार नहीं हैं।

रंजना के पिता अमीर हैं, उन्हीं के जैसा हमें भी बनना है, इस धुन में शेखर जुआ खेलता है, उसमें उसकी हार और फिर शराबी बनता है, दोनों में संघर्ष बढता जाता है और एक दिन बेटा, पत्नी, पति ये सब तीनों तीन तरफ बिखर जाते हैं। परिवार बिखराव के कारण रंजना पर बडी नौबत आ जाती है। पिता के यहाँ रहना पसन्द नहीं करती पति से भी वह अलग हो गयी है इस समय उसने अपने बेटे के तरफ भी ध्यान नहीं दिया और उसके जीवन में बहुत अलग परिवर्तन आ गया, वह पैसे के बारे में सोचने लगी। जीवन कैसा बिताना?क्या करना चाहिए? बिकने के लिए तो और कुछ नहीं है उसी समय वह लोक रंजन का प्रयोग करने लगी। जिसमें उसे बहुत पैसा प्राप्त होने लगा। उसकी फीस एक हजार रूपये थी।

वह अब गरीब नहीं थी, गाडी थी, दफ्तर था, नौकर थे, फोन वगैरा का इन्तजाम यानी दफ्तर का काम चलाने के लिए महिला सचिव, पुरूष सचिव सब स्टाफ था। इसी तरह वह सब भूलकर बिलकुल खुशी में जिन्दगी बिता रही थी। वह अब खुद के बारे में सोचती थी। कई बार समाज में रूढी परम्परा, प्रथा है, जिससे जिन्दगी बरबाद हो जाती है, यह विचार आने के कारण वह "बेला" नामक लडकी के शादी में जो दहेज का मामला

१. "जैनेन्द्रकुमार" दशार्क पृ. १, २।

आया था, इसके कारण कुछ अनर्थ होने वाला था, तो रंजना ने दहेज के पूरे पैसे दे दिये। इतना ही नहीं। समाज में नारियों की कुछ समितियाँ रहती हैं। उसी के अनुसार भगिनी समाज नामक एक संस्था कार्यरत है जिसके अध्यक्षा शेफालिका है, वह कुछ पैसे माँगने के इरादे से रंजना के पास आती है तो रंजना पाँच हजार रुपये उसको देती है। यानी जिसको जो कुछ चाहिए वह एक समाज कार्य के रूप में दे रही है। मगर पति एक बार पैसे के लिए आये थे उनको देना पसन्द नहीं करती रंजना अपने बेटे के शिक्षा के लिए एक साल को लगनेवाला, पैसा वह पति को देना चाहती है, और अपने बारे में उस लडके को कुछ नहीं बताना ऐसा कहती है। उसे तेरी माँ मर गयी है ऐसा कहने को रंजना कहती है।

रंजना के पास सब प्रकार के लोग आते हैं, माधवदास नामक स्मगलर, सरकारी अधिकारी, मन्त्री के सचिव का सहायक, पुलिस अफसर, मन्त्री मिल मालिक आदी उनका सत्कार, स्वागत सब रंजना के घर किया जाता है। रंजना इन्हीं सभी के आने जाने के कारण रंजना की मान, प्रतिष्ठा बढ गयी है। यह करते वक्त उसको अलग अलग अनुभव भी आ रहे थे। कई बार रंजना के घर मंत्री के सचिव वैगेरा आते हैं उनके पास पैसा नहीं रहता मंत्री के नाम बताकर ही काम चलाना चाहते हैं लेकीन रंजना को यह पसन्द नहीं तभी वे लोग रंजना को मारने में भी पीछे नहीं रहते। एक बार सचिव के सहाय्यक ने रंजना को मार गिराया और अपना बूट उसके बदन पर मारा उसके कारण बूट का नोकदार भाग उसके पसलियों में घूसकर चोट पहूँच गयी। सभी लोग इस प्रकार रंजना के साथ बर्ताव कर रहे थे। मगर रंजना कभी भी दुःखी नहीं रहती बल्की उनका खुशी में ही स्वागत और खुशी में ही बिदायी देती है।

पुलिस अफसर उसके यहाँ स्मगलर की तलाश में आते हैं, क्यों कि माधव नामक स्मगलर रंजना के पास आता है तो पुलिस अफसर उस पर बहुत अन्याय करते हैं गंदी बातें करते हैं लेकिन रंजना सही ढंग से उन से बात करती है रंजना में अहंम नहीं है। पुलिस अफसर बताते है अगर मैंने इस स्मगलर को नहीं पकडा तो मेरी नौकरी चली जायेगी तभी रंजना कहती है, कि मेरे जैसी को आपके मदद के लिए आना आवश्यक है आप इस्तीफा नहीं देंगे। तभी अफसर कहते है कि तुम्से मतलब ? रंजना कहती है, "मतलब है। मैं स्त्री हूँ। आपकी पत्नी स्त्री है, यह मतलब है। आप अपने नहीं हैं घर गिरस्ती के हैं बालबच्चों के हैं। किसी सनक में आप उनके भविष्य को मोहताज नहीं बना देंगे। मैं यहाँ क्यों हूँ, इसलिए की पैसा जरूरी है। उस जरूरत के बदले भगवान न करें किसी स्त्री को बाजार में आना पडे। तन बेचने के काम में।"[१]

इस तरह यह नौबत न आ जाय इसलिए स्मगलर को पकडकर देने को रंजना तैयार होती है और जो भी समाज में स्त्रियाँ हैं उनके बारे में रंजना सोचती हैं। रंजना के यहाँ विदेश से भी लोग आते है, उसमें फ्रान्स का "पियर" नामक एक युवक आता है दो दिन रहता है, जाता है, मगर उसका समंन्धा प्यार का नहीं दोस्ती का है, रंजना उससे कुछ चाहती नहीं वह भी रंजना से नहीं चाहता रंजना के पास उसके बिरादारी के लोग आते हैं, उसमें मेहन्दीबाई, सकीना, मालती, माधव , कालीचरण आदि हैं।

सकीना को एक रिस्तेदार ने छेडा, बिगाडा और हमल रहने पर बेच दिया। हमल गिराया गया और वहाँ से हाथों हाथ होती चकले में आ गयी। दूसरी जो मालती है, वह दसवीं का इम्तिहान देने वाली थी, मालती का मालिक जुआरी शराबी था। उसने बीवी को साधान बनाना चाहा। प्रतिरोधमें मारा पीटा। इससे समाज भी मालती का इस्तेमाल करते रहे। वह बर्दास्त न कर सकी और भाग निकली। भागती कहाँ ?

१. जैनेन्द्रकुमार "दशार्क" पृ. २४

मायके ? मायका और भी बन्द। क्या-क्या गुजरी अब वह यहाँ है।"[1]

मेहन्दी के किस्से से मालूम हुआ, कि वह शिकार नहीं शिकारी थी। माँ बचपन में उसे छोड गयी थी और बाप कैसे जीता था वही जाने। दस बरस की उमर में उसे सोहबत मिली तो वह जानती चली गयी, कि जिन्दगी क्या है, और औरत क्या है ? इसी कारण वह शादी होकर भी वहाँ नहीं रहीं यहाँ आकर पढी-लिखी न होकर भी गिरोह की मुखिया बन गयी। इस प्रकार इन औरतों के जीवन में अलग अलग प्रकार के प्रसंग आने के कारण वे इस व्यवसाय में आ गयी हैं। और रंजना ने भी यही मार्ग अपनाने के कारण वे सब एक बिरादारी के हैं उनकी एकता है, क्यों कि उनके सामने बहुत समस्याएँ रहती हैं मकान मालिक, दादा लोग, दलाल, पुलिस, सरकार, कानून और समाज इन सब विषय पर विचार करने के लिए रंजना के पास आते हैं।

रंजना अब पैसेवाली बन गयी है, लोग आते हैं, एक हजार फीस है, इसकी कारण सब कुछ ठीक था, मगर यहाँभी उसके जीवन में और एक मोड आ गया है। इस नगर के मिल मालिक मनिकलाल सेठ एक बार उसके पास आये थे, उन्होंने रंजना को पाँच लाख रुपये देने का वादा किया और उसके बदले में वे रंजना को प्राप्त करना चाहते थे। यानी वे यह सब इस आशा में करते हैं कि इस से रंजना उन्हें उपलब्ध हो जायेगी शरीर के स्तरपर उसे सम्पर्क में आते देगी। इसके बदले पाँच लाख रुपये देना। रंजना ने सोचा कि खरीदना चाहते हैं तब वह उन्हें हाथ तक धरने नहीं देती सिर्फ बातों से काम चलाना चाहती है, उससे आगे बस कुछ नहीं, तो उसके भीतर बहुत तीव्र भयंकर प्रतिक्रीया होती हैं, और वे पलक झपकते उससे दूर भाग जाते हैं, उसका घोर शत्रु हो जाते हैं, यहाँ तक उसे उखाड फेंकने के लिए उसके विरुद्द जनमत तैयार करते हैं।

१. जैनेन्द्रकुमार "दशार्क" पृ. ८८

मानिक लाल सेठ दु:खी हो गये हैं, वे हार जाने के कारण रंजना को जीवन से उठाने के बारे में सोचते हैं, अखबार में रंजना के खिलाफ बहुतसी बातों का बयान आता हैं, रंजना के कमरे का चित्र, रंजना की तस्वीर वगैरा सेठ ने अखबार के माध्यम से रंजना का जीना हराम कर दिया हैं, वहाँ का एरियां "रेड लाईट" एरियां घोषित किया जाता है। पुलिस रंजना को धमकाते हैं, गृहमन्त्रालय के सरकारी अधिकारी आते हैं, रंजना को नगर छोडकर जाने के लिए मजबूर करते हैं।

रंजना ने सेठ मानिकलाल को पत्नी मधुरिमा की सहाय्यता की थी, एक क्रान्तिकारी स्त्री पारमिता उसको भी कुछ मदद की थी, साथ ही साथ भगिनी समाज के लिए जो पाँच हजार रुपये लेकर जानेवाली शेफाली। ये सब लोग रंजना के खिलाफ आवाज उठा रहें हैं इतना ही नहीं शेफाली गृह मंत्रालय को डेपुटेशन देकर आयी है। चारों तरफ रंजना के बरबादी के ही दिन दिखाई दे रहे हैं।

इधर सभी वेश्याओंने भी अपना व्यवसाय बन्द कर दिया हैं, हडताल, आन्दोलन जारी है। सेठ मानिकलाल ने यह सब हंगामा शुरु किया है, इतना ही नहीं, रंजना के मकान का बेनाम मालिक वहीं है उसने वकील से मकान खाली करने का नोटीस दिया है। रंजना के बिरादरी के लोग माधवदास स्मगलर कालीचरण, मेहन्दीबाई सब आते हैं, वे मानिक सेठ के बारेमें कुछ गलत करना चाहते हैं लेकिन रंजना उन्हें यह करने नहीं देती बल्कि शान्त रहनेका ही इशारा देती है।

सेठ मानिकलाल ने "शिलरक्षा" के लिए कई लाख रुपयें एकठ्ठे किये हैं, मुनिवर विद्यासागर महाराज उसमें हैं, मधु, शेफाली, पारमिता इन्होंने भी कुछ समितियाँ की स्थापना करके सभा शुरु की है।

और इधर बहुत दिनों से बन्द रहने के कारण वेश्याओं की स्थिती दयनीय बन गयी है, खाने के लिए कुछ भी नहीं। चन्दा वगैरा जमा करके

कुछ दिन गुजारे मगर अभी कुछ नहीं है। तभी मेहन्दीबाई रंजना के पास आकर कुछ हाल बताती है, कालीचरण भी आता है, तभी रंजना कालीचरण के पास माधव को देने के लिए एक चिट्ठी देती है, इन लोगों की सहायता के लिए, और खुद मानिकलाल सेठ को मिलने के लिए फोन से मधुरिमा से पूछती है, मधुरिमा फोन मानिक सेठ को देती है तभी मिलने के बारे में चर्चा होती है; फिर सेठ नगरके एक बडे होटल का पता देते हैं। रंजना वहाँ जाती है। सेठ दरवाजा खुला रख के शराब की बोतल खोलकर पीने लगते हैं, रंजना को भी पीने को कहते हैं मगर रंजना यह काम नहीं करती। रंजना सेठ से कहती है कि मुझे एक लाख की आवश्यकता है, सेठ ने रंजना को बहुत मारा, पीटा रंजना पिटती गयी वस्त्र इधर उधर बिखर गये, रंजना के बाल भी बिखरे गये थे। रंजना को सिर्फ मार खाकर ही वापस आना पडा। एक लाख रुपये लेकर जो बन्द के वजह से भूखे मर रहे थें उनको देने के इरादे से रंजना सेठके पास पैसे माँगने गयी, लेकीन रंजना को सफलता नहीं मिली। उसे दुःखी होकर वापस आना पडा।

बादमें गृहमन्त्री रंजनाके यहाँ आनेवाले है यह बात मानिकलाल को मालूम होती है वह बहुत डरा हुआ है, रंजना से कहता है मेरे बारे में मन्त्री को कुछ मत बताओ मैं अपने सभी लोगों की सहायता करने को तैयार हूँ और वह मेहन्दी बाई के द्वारा सभी चीजे भेजने की व्यवस्था करता है। वह जेल जाने से डर रहा है, पूछताछ पुलिस द्वारा होनेवाली है इसलिए रंजना से सहायता की अपेक्षा करता है रंजना भी ऐसी औरत नहीं जो दूसरों को दुःख हो जाय ऐसा करना नहीं चाहती। और मंगलवार के दिन मन्त्री महोदय आते हैं, उसके पहले उन्होंने स्वामी अभेदानन्द से रंजना को कुछ सन्देश दिया था। मन्त्रीने पुलिस अफसर अंगरक्षक इन सभी को बाहर खडा कर दिया और अकेले रंजना के घर

गये। उन्होंने पूछा तुम नगर छोडकर नहीं जाओगी। नगर शान्त रहना चाहिए। तभी रंजना कहती है, यहाँ वैसी कोई स्थिति नहीं है। अखबारों ने यह सब हर रोज मेरे खिलाफ छापकर किया लेकिन अब सब शान्त है। मन्त्री रंजना को उसका पति शेखर की हालत बताते हैं, वह इधर उधर भटकता है उसको सहारे की आवश्यकता है, और वह तुम्हें उसकी सहयता करना आवश्यक है। यह सब मालूम होने पर रंजना कहती है, कहाँ है वे ... ?

और रंजना बादमें पति को अपनाने के लिए तैयार होती है। साथ ही साथ मन्त्री महोदय की उसने चरण-धूलि ली और माथे से लगाई। जैसे पिता श्वसुर दोनों एक-सम होकर उन्होंने झुकी रंजना के सिरपर हाथ रखा। मानो अपने आशिर्वादसे अभिषिक्त किया। यहाँ उपन्यास खत्म हो जाता है लेकिन पाठक के सामने सवाल खडा रहता है, समाधान नहीं होता।

निष्कर्ष

जैनेन्द्र कुमार मनोवैज्ञानिक एवं मनोविश्लेषक कथाकार हैं। यही कारण है कि उन्होंने हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधी को नया आयाम दिया है। वे अपने उपन्यासों में बाहय जगत की कथा के स्थान पर पात्र के अन्त: जगत और उसकी मानसिक कुण्ठा तथा घुटन के विश्लेषन पर जोर देते हैं। उन के उपन्यासों का मूल स्वर व्यक्ति के अहंवाद के चित्रण की दिशा में उसकी कुण्ठा, दमित वासनाओं, अहंवृत्तियों तथा मानसिक घुटन से आक्रान्त है। उनके संपूर्ण साहित्य में अहंकार और प्रेम की स्पर्धा और समर्पण का संघर्ष ही निरुपित हुआ है और अपनी विशिष्ट आस्तिकता को उन्होंने अपने उपन्यासों में कलात्मक निर्देश भी दिया है। क्यों कि वे सत्य की सिध्दि को ईश्वर का पर्याय मानकरचले हैं तथा

जीवन की स्थूलताको स्थान देने के स्थान पर उन्होंने आध्यात्मिक वृत्ति को प्रतिष्ठापित करने की चेष्टा की है। आत्मपीडन और आत्मव्यथा के अकेले चित्रकार के दृष्टिकोन से वे हिन्दी उपन्यास जगत में अपना विशिष्ट स्थान बना चुके हैं।